



५० वर्षों से
प्रकाशित

कौल-कल्पतरु
चण्डी

साधन-माला

- साधना-योग्य शरीर हेतु अनुभूत प्रयोग •
- सर्व-संकट-हारी-प्रयोग • गप-शप विष-हर प्रयोग •
 - सर्वाभीष्ट-प्रद प्रयोग • योग्य वर-प्राप्ति का प्रयोग •
 - सन्तान-प्राप्ति-प्रयोग • दीर्घ आयु, सुख-शान्ति हेतु प्रयोग •
 - परीक्षा में सफलता, स्मरण-शक्ति-वर्द्धन प्रयोग • नित्य-कर्म •
 - शान्ति-कर्म • रोग, उपद्रव की शान्ति हेतु सप्तशती-प्रयोग •
 - अनावृष्टि-निवारक प्रयोग • सर्व-सिद्धि-प्रद श्रीगणेश-कवच •

श्रीचण्डी-पुराणम्

(हिन्दी अर्थ सहित)



एक दुर्लभ पाण्डुलिपि
का
हिन्दी अनुबाद सहित
पहले पहल प्रकाशन

- * 'चण्डी'-स्वरूप-दर्शन
- * 'चण्डी' नाम का अर्थ
- * 'चण्डी' के विभिन्न स्वरूप
- * 'चण्डी' की उपासना
- * नारद को शाप
- * सती द्वारा देह का परित्याग
- * दक्ष का चरित
- * मधु-कैटभ का वध
- * घोर-वध में नदी का वर्णन
- * घोरसुर का वध
- * चिक्षुर का वध
- * महिषासुर का वध
- * सुन्द और उपसुन्द का वध
- * मुर आदि दैत्यों का संहार
- * तीर्थों का माहात्म्य

मूल्य १५-०० रु०



मानद सम्पादक
श्री रमादत्त शुक्ल

सम्पादक
श्री ऋतशील शर्मा

पता
चण्डी कार्यालय,
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयाग-२११००६
(उ० प्र०)

दूर-भाष
६०६७८३

शुल्क भारत में
एक प्रति : रु० ५

वार्षिक शुल्क : रु० ५५
आजीवन शुल्क : रु० ५५०

शुल्क विदेश में
हवाई डाक/समुद्री डाक

वार्षिक : रु० ५००/३००
आजीवन : ५०००/३०००

शुल्क मनीआर्डर या ड्राफ्ट
से कार्यालय के पते पर भेजें

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयाग-२११००६

हिन्दू-धर्म के ज्ञान-मय क्रिया-पक्ष
की
'राष्ट्र-भाषा' में शोध-पूर्ण प्रस्तुति

कौल-कल्पतरु चण्डी

वर्ष ५१

अङ्क १

'पार्थिव' सम्बत्, २०४६ वि० चैत्र, २०४६ वि० अप्रैल, १९६२

'चण्डी' के प्रवर्तक

'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल जी की १०५ वीं जयन्ती

जन्म-तिथि : वैशाख कृष्ण ३, सं० १९४५ वि०-१३ अप्रैल, १८८७



'चण्डी' के नए ५१ वें वर्ष का यह प्रथमाङ्क 'चण्डी' के प्रवर्तक 'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त जी शुक्ल की १०५ वीं जयन्ती के प्रति समर्पित है।

पं० देवीदत्त जी शुक्ल की प्रेरणानुसार 'चण्डी' के नए ५१ वें वर्ष द्वारा हिन्दू-धर्म के ज्ञान-मय क्रिया-पक्ष की सुन्दर प्रस्तुति हेतु एक विशेष लेख-माला 'साधन-माला' प्रकाशित हो रही है। हमें विश्वास है कि सभी पाठक-बन्धु अपने परिवार-जन एवं समाज-सहित इससे लाभ उठाएँगे।

विज्ञ बन्धुओं से सादर निवेदन है कि समाजोपयोगी सरल साधनाएँ विधि-यन्त्रादि-चित्र-सहित प्रकाशनार्थ भेजने की कृपा करेंगे, जिससे हम उन्हें प्रकाशित कर सकें और पाठक-समुदाय उनसे अधिकाधिक लाभ उठा सकें।

इस अंक में

१ श्रीब्रह्म-गीता

२

२ भगवान् का रहस्य : पं० ज्वालाप्रसाद तिवारी

३

३ साधन-माला (आध्यात्मिक प्रयोगों का संग्रह)

६-१०

४ ॐ श्रीकाल्यै नमः : पं० बलराम दुबे

३१



श्रीब्रह्म गीता

॥ चौपाई ॥

सर्वात्मा रूप जो जाना । है सोई ब्रह्म-देव कर ध्याना
बाहर भीतर पूरण देखै । सोइ आवाहन तासु विशेषै
सर्वाधार जानिबो जोई । ब्रह्म - देव हित आसन सोई
स्वच्छ जानिबो अर्घ अनूपा । जानै शुद्ध आचमन-रूपा
निर्मल जानब सोइ अस्नाना । विश्वात्मा वसन परिधाना^१
है निर्गन्ध सुगन्ध सुहाई । निर्वासना सुमन सुख-दाई
निर्गुण जानब धूप समीपा । स्वयं प्रकाश-मान सोइ दीपा
तृप्त सदा नैवेद्य प्रमाना । गुनि निःसौख्य^२ चढ़ावे पाना
जानि अनन्त प्रदक्षिण सोई । है अद्वैत^३ सो अस्तुति होई
भीतर-बाहर पूरण जाना । इहै विसर्जन जानु सुजाना
इहै सदा सुधि राखै जोई । ब्रह्म-देव नित पूजत सोई

॥ दोहा ॥

देह-बुद्धि से दास हौं, जीव - बुद्धि से अंस ।
आत्म-बुद्धि से एक हौं, यह मम मत निःशंस^४ ॥
ऊँच-नीच बड़ छोट तन, जाति जीव अभिमान ।
सर्व भेद भ्रम-मात्र तजि, ब्रह्म-देव सत जान ॥
सर्व अहं की सर्वत्वं, यह तुरिया^५ अहङ्कार ।
शान्त शुद्ध हूँ त्वं रहित, तुरियातीत विचार ॥
तेहि मा थित हूँ कै सदा, बिचरहु जीवन्मुक्त ।
अस कहि अन्त-रहित भए, ब्रह्म-शक्ति संयुक्त ॥

१ परिधाना = पहिनना । २ निःसौख्य = सुख-रहित । ३ अद्वैत = एक । ४ निःशंस = निश्चित ।

५ तुरिया = चौथा



भगवान् का रहस्य

पण्डित ज्वालाप्रसाद तिवारो



एक आदमी बाजार के एक बड़े प्रसिद्ध चौराहे पर खड़ा होकर जोर से चिल्लाकर सभी बाजारवालों को सम्बोधित करता हुआ पूछता है कि 'इस बाजार में सबसे अधिक बुद्धिमान कौन है ?'

दूसरा आदमी, जो संयोग-वश उसी चौराहे से कहीं जा रहा था, निस्सङ्कोच बोल पड़ा कि—'मैं सबसे अधिक बुद्धिमान हूँ ।'

पहला आदमी—ठीक ! सबसे अधिक शक्ति-शाली व्यक्ति कौन है ?

दूसरा आदमी उत्तर देता है कि—'मैं ही सबसे अधिक शक्ति-शाली व्यक्ति हूँ ।'

पहला आदमी—बहुत ठीक, भला बताइए कि सबसे अधिक धनी व्यक्ति कौन है ?

दूसरा आदमी—'मैं ही सबसे अधिक धनी व्यक्ति हूँ ।'

पहला आदमी—सभी कुछ बुद्धिमान्, शक्ति-शाली, धनी तुम्हीं हो ?

दूसरा आदमी—हाँ जी । मैं ही बुद्धि-मान् हूँ, शक्ति-शाली हूँ, धनी हूँ, सभी कुछ हूँ ।

पहला आदमी—उहरिए, बतलाते जाइए कि सबसे अधिक बुद्धू, सबसे अधिक निर्बल और सबसे निर्धन कौन व्यक्ति है ?

दूसरा आदमी दृढ़ता के साथ निस्सङ्कोच उत्तर देता है कि—'मैं ही सबसे अधिक बुद्धू, निर्बल और सबसे अधिक निर्धन हूँ ।'

पहला आदमी—ऐसा कभी नहीं हो सकता कि एक ही मनुष्य सबसे अधिक बुद्धि-मान्, शक्ति-शाली तथा धनी भी हो और साथ-ही-साथ बुद्धू, निर्बल और निर्धन भी !

दूसरा आदमी—मैं बिल्कुल सच कहता हूँ । आप बिना सोचे-समझे विश्वास नहीं करते, इसमें मेरा क्या दोष ? आप स्वयं सोचिए-समझिए, आपको ज्ञात हो जाएगा ।

पहला आदमी—इसमें सोचने के लिए कोई विशेष बात ही नहीं, ऐसा कभी हो ही नहीं सकता ।

दूसरा आदमी—ज्ञात हुआ कि आप समझ नहीं पाए । आइए, एकान्त में बैठ जाएँ और इस मसले को सुलझा डालें ।

दोनों चौराहे के एक किनारे जाकर बैठ गए और बातें शुरू हो गईं ।

दूसरा आदमी—मेरे वाहन को न देखें, किन्तु मेरी ओर देखकर बतलाएँ कि समझें या नहीं ?

पहला आदमी—इसमें क्या समझें ? आपकी ओर क्या देखें ! चेहरा पीला, गाल बैठे हुए, आँखें गढ़े में घुसी हुई, शरीर निर्बल-से-निर्बल !

दूसरा आदमी—शान्ति से सोचो । आपने तो वाहन की विशेषता वर्णन कर डाली । अन्दर जाकर देखो !

पहला कुछ सोचने-सा लगा । तत्पश्चात् बोला—देख लिया अन्दर जाकर—खोखला ! हाँ, एक मांस का टुकड़ा अवश्य देखा, जिसको डाक्टर लोग 'हार्ट' (हृदय) कहते हैं ।

दूसरा आदमी—कोई गुफा भी दिखाई पड़ी ?

पहला आदमी—नहीं । 'हार्ट' को अवश्य हिलते-डुलते देखा ।

दूसरा आदमी—हाँ, वह तो ऊपर से ही मालूम पड़ जाता है । अन्दर से देखने की कोई आवश्यकता ही न थी । सुनिए, वहीं पर एक 'शक्ति', जो सूक्ष्म-से-सूक्ष्म है, छिपी हुई बैठी है ।

इसी 'शक्ति' को हमारे ऋषियों, मुनियों ने देखा । यही 'शक्ति' हम लोगों में काम करती है । यही 'शक्ति' ज्ञान का भण्डार, सर्व-शक्तिमान् और धनियों में धनी है । इसी 'शक्ति' के बल पर हम लोग चिल्लाते घूमते हैं—'मैं हूँ', 'मैंने किया' या 'मैंने देखा' । यथार्थ में यही 'शक्ति' देखती - सुनती है और चलती है ।

इस 'शक्ति' की प्रेरणा से हम लोग सब काम करते हैं, परन्तु यह जिस वाहन पर बैठी हुई है, वह मिट्टी का बना हुआ है । अज्ञानता-वश यह मिट्टी का वाहन चिल्लाता घूमता है कि—'मैंने अमुक कार्य किया' । वास्तव में इस वाहन में कोई ज्ञान नहीं, कोई शक्ति और साधन नहीं ।

यह वाहन नितान्त बुद्धू, निर्बल और निर्धन है । मैं प्रथम प्रश्न को सुनकर ही समझ गया था कि आप उस 'शक्ति' के बारे में पूछ रहे हैं । तुरन्त निःसङ्कोच कह दिया कि 'मैं ही सबसे अधिक बुद्धि-मान्, शक्ति-शाली तथा धनी व्यक्ति हूँ, परन्तु जब आपने दूसरा प्रश्न किया, मुझे समझने में देर न लगी कि अब आप मिट्टी के बने हुए वाहन के बारे में जानना चाहते हैं । इसी कारण पूछते हैं कि सबसे अधिक बुद्धू, निर्बल और निर्धन कौन है ? इसमें क्या सोचना था, उत्तर दे दिया कि—'मैं' ।

दोनों प्रश्नों के उत्तर में 'मैं' क्यों कहा ? इसलिए कि हम प्राणी लोग उस 'शक्ति' तथा उसके वाहन के साथ 'मैं' शब्द का प्रयोग करते हैं । इसमें कोई अचम्भा नहीं । अकेली 'शक्ति' ही 'मैं' नहीं और न अकेला वाहन ही अपने को 'मैं' कहता है क्योंकि उस 'शक्ति' के कोई इन्द्रिय नहीं । जब ऐसा है, तो 'मैं'- 'मैं' कहता कौन घूमे ! यह शक्ति जब जिस शरीर को ग्रहण करती है, उससे संयुक्त होकर वैसी ही बन जाती है ।

वाहन (शरीर) मिट्टी का बना हुआ है । बिना उस शक्ति के कोई इन्द्रिय काम नहीं कर सकती । फिर 'मैं' शब्द का प्रयोग कैसे हो सकता है ?

पहला आदमी—यदि ऐसा है, तो हम प्राणी लोग 'मैं' का प्रयोग गलत करते हैं ?

दूसरा आदमी—सच कहते हो । परन्तु ऐसा न कहें, तो संसार का काम कैसे चले ? यहाँ तो कठ-पुतली का खेल हो रहा है । यदि कठ-पुतली यह न कहे कि मैं अमुक स्थान का राजा हूँ, तो खेल ही बन्द हो जाए । देखने में ऐसा मालूम पड़ता है कि कठ-पुतली स्वयं बोलती है, परन्तु वास्तव में वह नट, जो

कि अपना खेल दिखा रहा है, बोलता है। इसी भाँति ऐसा प्रतीत होता है कि यह मिट्टी का वाहन (शरीर) बोल रहा है। वास्तव में बोलता है वह, जो इस सृष्टि के आरम्भ में कौतूहल - वश कह उठता है कि—‘एकोऽहम् बहु स्याम्’—एक हूँ, बहुत हो जाऊँ। यह इच्छा प्रकट करने पर ही सृष्टि की रचना हो गई।

पहला आदमी—तो हम लोगों को क्या करना चाहिए ? हम लोगों का क्या धर्म है ? क्या हम लोग ‘मैं’ और ‘हम’ शब्दों का प्रयोग करना छोड़ दें ?

दूसरा आदमी—भली-भाँति इस बात को सोचिए। यह बात कठ-पुतली के वश की नहीं है कि वह सब काम छोड़कर-बोलना, चलना इत्यादि चुपके से बन्द कर, ‘नट’ के थैले में घुसकर बैठ जाए। ‘नट’ ऐसा कभी न होने देगा। ‘कर्म’ न करना, प्राणी - मात्र के वश की बात नहीं ! उसे ‘कर्म’ करना ही पड़ेगा। प्राणी-मात्र का मुख्य धर्म है कि उस ‘नट-वर’ को, जो सब प्राणी - मात्र को नचानेवाला है, न भूले। जो कुछ कर्म करे, उसको यही समझे कि ‘नट’ कर रहा है। वही ‘नट’ मुझसे भाँति-भाँति के शब्द बुला रहा है। ये सब कर्म उसकी इच्छा से हो रहे हैं। जब प्राणी ऐसा सोचेगा, तो घमण्ड, ईर्ष्या इत्यादि कैसे हो सकेंगे ? इतना ही करने से प्राणी का कल्याण हो जाएगा।

पहला आदमी—प्राणी का ‘कल्याण’ हो जाएगा ! मैं समझ न सका कि मिट्टी के वाहन का क्या ‘कल्याण’ होगा, फिर रहा कि शक्ति का, जो सर्व-शक्तिमान् है—जैसा आपने अभी बतलाया है, उसका ‘कल्याण’ कैसा ? वह तो स्वयं ‘कल्याण’-मय है। इसे और समझाइए।

दूसरा आदमी—यह प्रश्न सुनने में अति सरल व सहज प्रतीत होता है, परन्तु इसका उत्तर अति कठिन और गूढ़ है। तब भी मुझे यथा - शक्ति कहना या समझाना ही पड़ेगा। ‘राम - चरित - मानस’ में तुलसीदास जी ने कहा है—‘सो जानहि, जेहि देहु जनाई।’

वही इस भेद को समझ सकेगा, जिसको वह ‘शक्ति’ स्वयं जना दे या समझा दे। खैर, जाने दो इन बातों को। पहले यह समझा जाए कि इस जीवात्मा अथवा वाहन (शरीर) का कल्याण कैसे होता है ? ऊपर कहा गया है कि वह ‘शक्ति’ जो स्वयं कल्याण-मय है, उसका ‘कल्याण’ कैसा ? नितान्त ठीक है ! अभी मैंने ही ‘शक्ति’ के स्थान पर प्राणी तथा जीवात्मा शब्दों का प्रयोग किया है। आपको शङ्का हो गई होगी कि कभी ‘शक्ति’, कभी ‘जीवात्मा’ (प्राणी) शब्द का प्रयोग करते हैं ! क्या इन शब्दों में कोई भेद है या नहीं ? यदि है, तो कितना ? इसी भेद को थोड़ा-सा समझा दूँ।

‘प्राणी’, ‘जीव’ अथवा ‘जीवात्मा’—ये सब शब्द पर्याय - वाची हैं। ‘शक्ति’ को, जैसा ऊपर प्रयोग किया गया है—शक्ति, परमात्मा, ईश्वर, भगवान्, अल्लाह व गॉड इत्यादि कहते हैं और ये शब्द भी पर्याय-वाची हैं।

‘जीवात्मा’ एवं ‘परमात्मा’ (शक्ति) में उतना ही भेद है, जितना धूप और छाया में। धूप के प्रकाश से छाया में प्रकाश रहता है। ‘जीवात्मा’ छाया की भाँति अल्प-प्रकाश, अल्पज्ञ है। ‘शक्ति’ (परमात्मा) धूप की भाँति पूर्ण-प्रकाश और सर्वज्ञ है। जैसे छाया में अल्प-प्रकाश, पूर्ण प्रकाश-रूप धूप का ही होता है, उसी भाँति जीवात्मा का अल्प-ज्ञान भी सर्वज्ञ परमात्मा (शक्ति) का ही होता है।

पहला आदमी—वाहन (शरीर) का ‘कल्याण’ कुछ नहीं। वह तो ‘पञ्च-रचित यह अधम शरीरा, छिति जल पावक गगन समीरा’ है। ये सब तत्त्व अपने-अपने तत्त्वों में मिल जाते हैं। सोचना या समझना है कि जीव अथवा जीवात्मा का ‘कल्याण’ कैसे होता है ?

दूसरा आदमी—इसको समझाने के लिए मुझे कुछ उदाहरण देकर ही समझाना पड़ेगा। ध्यान-पूर्वक समझने की चेष्टा करें, तो अच्छा होगा।

समुद्र के जल में 'नमक' भी मिला रहता है। परन्तु 'नमक' पृथक् दिखाई नहीं पड़ता, अपितु समुद्र के जल का सा ही उसका रङ्ग-रूप होता है। उसकी लहरों की भाँति उसकी भी चाल-ढाल होती है। उसका नाम भी समुद्र होता है। कोई यह नहीं कहता कि 'नमक' वह रहा है। सभी यही कहते हैं कि समुद्र की लहरें उठती हैं, या आती हैं। समुद्र की लहरें अपार हैं, उनकी गणना नहीं की जा सकती, परन्तु जब 'नमक' समुद्र के जल से पृथक् हो जाता है, तब इसका नाम 'नमक' पड़ जाता है। कोई इसे समुद्र नहीं कहता।

इस 'नमक' का रङ्ग भी समुद्र की भाँति नहीं रहता। रङ्ग सफेद हो जाता है। तब यह समुद्र की भाँति बहता भी नहीं—ठोस-स्थायी हो जाता है। जब 'नमक' समुद्र में होता है, उसका यश एवं प्रकाश भी समुद्र का सा ही होता है, परन्तु समुद्र से अलग होते ही वह उस यश एवं प्रकाश से हाथ धो बैठता है। इतना ही नहीं, अपितु भाँति-भाँति की दुर्दशा होती है। बेचारा कूटा और पीसा जाता है। घर-घर में मारा-मारा फिरता है। कभी छोटे-से घरों में, कभी भाग्य-वश बड़े घरों में चक्कर लगाता फिरता है। यदि इस 'नमक' बेचारे को इस बात का ज्ञान हो जाए कि समुद्र से पृथक् होने के पूर्व उसकी क्या महिमा थी ? क्या रूप था ? क्या रङ्ग और चाल-ढाल थी ? तो उसको उस पूर्व दशा के प्राप्त करने की कितनी उत्कट इच्छा होगी !

अपनी इच्छा को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए 'नमक' को सबसे पहले समुद्र के पास पहुँचने का प्रयत्न करना पड़ेगा। समुद्र के पास किसी भाँति पहुँच जाए और किनारे बैठा रहे, तो उसे पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होगी। हाँ, इतना अवश्य होगा कि वह समुद्र के यश, रङ्ग और लहरों का आनन्द लेता रहे। यह केवल दूसरे को हँसते देखकर हँस देने के बराबर होगा। असली हँसना तो स्वयं हँसना है। इसी को 'आनन्द' कहते हैं। दूसरे को दिखाने के लिए हँसना, हँसना नहीं।

'नमक' को अपने नाम के पहले या बाद में 'समुद्र' शब्द जोड़ देने से भी पूर्ण आनन्द नहीं मिल सकता और न कल्याण ही हो सकता है। 'नमक समुद्री' अथवा 'समुद्री नमक' पुकारे जाने पर भी कोई अन्तर न पड़ेगा। 'सिंह'-शब्द नाम में जोड़ देने से कोई 'सिंह' नहीं हो सकता। अतएव 'नमक' को समुद्र में घुसाकर, अपनी हस्ती को मिटाकर—अपने को गलाना पड़ेगा। तब कहीं कठिनाई से समुद्र बन पाएगा और तभी 'नमक का कल्याण' हो सकेगा। वह अपने खोए हुए असली रूप को पाएगा।

'नमक' की ही भाँति जीवात्मा 'समुद्र'-रूपी परमात्मा से बिछुड़ा हुआ है। अनन्त काल से संसार-रूपी वीहड़ वन में इधर-उधर 'सुख की खोज में' भटक रहा है। 'सुख' समझ कर जहाँ जाता है, वहीं धोखा खाता है। सर्वथा साधन-हीन और दयनीय है। जब तक वह 'कल्याण - मय परमात्मा' के समीप नहीं पहुँच जाता, उसका कल्याण नहीं हो सकता।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'समुद्र'-रूपी परमात्मा दया-मय है। उसने 'नमक'-रूपी जीव के कल्याण के लिए कई साधन दिए हैं। जैसे मानव-रूपी शरीर, सुन्दर साधन-मय रथ दिया है। 'इन्द्रिय' - रूपी वलवान घोड़े दिए हैं। घोड़ों के 'मन'-रूपी लगाम लगी हुई है और 'बुद्धि'-रूपी सारथी के हाथ लगाम सौंपकर, जीवात्मा को उसने रथ का स्वामी बना दिया है। अतः जीवात्मा का धर्म है कि 'बुद्धि' - रूपी

सारथी को प्रेरणा करता रहे कि 'मन'-रूपी लगाम का प्रयोग करता हुआ, 'इन्द्रिय'-रूपी घोड़ों को, दया-मय परमात्मा की ओर ले चलनेवाले नाम, रूप, लीला, निरन्तर श्रवण - कीर्तन व मननादि सहज मार्ग से चलकर शीघ्र परमात्मा के धाम में पहुँचाए। यदि रथ का स्वामी जीवात्मा 'बुद्धि' - रूपी सारथी को सावधान रहने की प्रेरणा नहीं करता रहेगा, तो 'बुद्धि' - रूपी सारथी असावधान होकर, 'मन' - रूपी लगाम ढीली कर, घोड़ों को उनकी इच्छा पर छोड़ देगा। ये दुष्ट घोड़े 'विषय' - रूपी हरी - हरी घास चरते हुए, रथ को गहरे गड्ढे में डाल देंगे। फलतः जीवात्मा सदा भटकता फिरेगा।

पहला आदमी—कृपया इस विवेचन को और सरल रीति से समझाइए।

दूसरा आदमी—आप जो बोलते हो, सुनते व चलते हो—इत्यादि कर्म इन्द्रियों द्वारा ही होते हैं। स्थूल शरीर में सभी कर्मों की पृथक् - पृथक् इन्द्रियाँ हैं। इन्द्रियों के द्वारा सम्पादित कर्मों को कराता कौन है? 'मन'। 'मन' में आता है, किसी को मारें, तो हाथ मारने लगता है। 'मन' में आता है, किसी भूखे को खिलाएँ, तो हाथ भूखे को खिलाने लगते हैं।

इस प्रकार मन द्वारा मुख्यतः दो प्रकार के कर्म कराए जाते हैं। एक तो किसी को पिटवा दिया। दूसरा किसी भूखे को खिलवा दिया। भूखे को खिला देना—अच्छा कर्म और पिटवा देना—बुरा कर्म हो गया। इन्द्रियाँ न अच्छा और न बुरा कर्म करती हैं। 'मन' कराता रहता है। 'मन' से अच्छे कर्म कराने और बुरे कर्मों से बचानेवाली 'बुद्धि' है। 'बुद्धि', 'मन' को ठीक रखे, तो सब कर्म अच्छे-ही-अच्छे होंगे। जब कर्म अच्छे होंगे, तभी यह जीवात्मा, परमात्मा के धाम में पहुँचेगा। इसी में जीवात्मा का 'कल्याण' है, अन्यथा जीवात्मा भटकता रहेगा।

पहला आदमी—धन्यवाद ! आपने मुझे भगवान् के रहस्य को भली-भाँति समझा दिया।

दूसरा आदमी—भगवान् के रहस्य को समझाना बहुत कठिन है। वह असीम है ! बड़े - बड़े ऋषि-मुनियों ने हजारों वर्ष तपस्या के बाद भी 'नेति-नेति' (यह नहीं, यह नहीं) कह दिया, ईश्वर के भेद को न समझ सके। ईश्वर दीन-बन्धु, दया-निधान और दयालु है। वह इस बात का भी ध्यान नहीं देता कि किस भाँति मनुष्य मेरे पास पहुँचने का प्रयत्न कर रहा है। वह केवल 'श्रद्धा', 'विश्वास' और 'उत्कट इच्छा' पर ही, उसका 'कल्याण' करने को तत्पर रहता है।

ईश्वर जानता है कि प्राणी-मात्र में इतनी शक्ति नहीं कि वह कुछ कर सके या मुझे समझ सके। जैसे छोटा बच्चा माँ-बाप को देखकर उनकी गोद में जाने की इच्छा पर, केवल हाथ उठाता है और अपनी उत्कट इच्छा जिस भाँति वह नन्हा बच्चा कर सकता है, करता है। परन्तु माँ-बाप को समझने में देरी नहीं लगती, तुरन्त गोद में उठाकर ले लेते हैं। इसी भाँति परमात्मा, हम लोगों का (प्राणी - मात्र का) माता-पिता है। उसकी ओर छोटे बच्चे की भाँति हाथ उठाने पर अपनी उत्कट इच्छा—हँसकर, रोकर या और किसी भाँति श्रद्धा तथा विश्वास के साथ प्रकट करने पर, वह हमको अपनी शरण में ले लेता है।

अतएव मनुष्य का धर्म है कि सर्व-शक्ति-मान्, सर्वाधार भगवान् की प्राप्ति का प्रयत्न करे। सफलता मिलेगी—अवश्य मिलेगी। इसमें सन्देह नहीं। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि भगवान् से यही कहते रहो चौबीसों घण्टे कि—'भगवन् ! मेरा कल्याण करें। मुझमें कुछ ज्ञान नहीं, मैं तो कोई मार्ग भी नहीं जानता कि किस मार्ग से मैं तेरे पास पहुँचूँ। हे भगवन् ! मुझसे कोई ऐसा काम न होने दो कि जो तुम

तक पहुँचने में बाधा डाले। भगवन्, मैं तेरे सहारे हूँ। मेरा इस संसार में तेरे सिवा कोई नहीं।' इस भाँति उसकी शरण में आ जाओ। सर्वथा कल्याण होगा।

पहला आदमी—बड़ी कृपा आपकी हुई। आपने समझाने का प्रयत्न किया। तब भी मेरी समझ में यह नहीं आया कि मैं कैसे धनियों का धनी, सर्व-शक्तिमान् तथा बुद्धि का भण्डार हुआ क्योंकि 'मैं' शब्द का जीवात्मा के लिए ही प्रयोग हुआ और जीवात्मा आपके कथनानुसार छाया की भाँति अल्पज्ञ तथा अल्प-प्रकाश है। जब ऐसा है, तो जीवात्मा अल्प-बुद्धि, अल्प-शक्ति, अल्प-साधनवाला हुआ। हाँ, वाहन (शरीर) के बारे में अवश्य मान लिया कि वह बुद्धू, निर्बल और निर्धन है।

दूसरा आदमी—सोचिए तो। आपने मुझसे पूछा था। इसके क्या अर्थ हुए कि—एक जीवात्मा दूसरे जीवात्मा से पूछता है। इसी जीवात्मा के लिए 'मैं', 'वह' तथा 'अन्य'—सर्व-नामों का प्रयोग होता है। 'जीवात्मा', परमात्मा का ही अंश है। फिर यह भी समझाया कि 'जीवात्मा' का 'कल्याण' कैसे होता है—'नमक' और 'समुद्र' का उदाहरण देकर। 'नमक' अपने नाम-रूप को त्याग कर, 'समुद्र' बन जाता है। उसी भाँति 'जीवात्मा', नाम और रूप को त्याग कर, परमात्मा बन सकता है। जब 'जीवात्मा' परमात्मा बन जाएगा, उसमें भी वही शक्ति आ जाएगी, जो परमात्मा में है। तभी वह सर्व-शक्तिमान्, बुद्धि का भण्डार तथा धनियों का धनी हो जाएगा।

आपको शङ्का होगी कि परमात्मा बनने के पहले कैसे कह दिया कि मैं सबसे अधिक बुद्धिमान्, शक्ति-शाली तथा धनियों का धनी हूँ। एक छोटी-सी मिसाल देता हूँ। जाड़े से काँपता हुआ एक मनुष्य कपड़ेवाले के यहाँ जाकर कहता है कि—'जाड़े से बचनेवाला कपड़ा दो।' दुकानदार एक ऊनी कपड़े का थान लाकर उसके सामने डाल देता है और कहता है कि—'यह कपड़ा तेरे जाड़े को भगा देगा।' इसका यह अर्थ नहीं कि कपड़े को पास रख लेने से, जाड़ा डर के मारे पास न आएगा। उसका मतलब था कि—इससे कुर्ता या कोट बनवाकर पहनें, तब यह जाड़े को भगाएगा।

पहला आदमी—क्या जीवात्मा और परमात्मा दोनों इसी शरीर के अन्दर रहते हैं?

दूसरा आदमी—'श्वेताश्वतरोपनिषद्' में 'शरीर' को 'अश्वत्थ वृक्ष' और जीवात्मा तथा परमात्मा को दो पक्षियों के रूपक में समझाया गया है। मैंने वाहन पर बैठकर समझाया है। 'नमक' और 'समुद्र' का उदाहरण दिया है। उपनिषदों में नदी और समुद्र का उदाहरण देकर समझाया गया है।

पहला आदमी—धन्यवाद ! भगवान् के रहस्य को कुछ-कुछ समझा, थोड़ा और बताएँ, जिससे मेरा भी 'कल्याण' हो जाए।

दूसरा आदमी—मनन करो ! उस परमात्मा की शरण में जाओ। जब उसकी कृपा होगी, तभी उसके भेद-रहस्य का भली-भाँति समझ सकोगे—'सो जानहि, जेहि देहु जनाई।' अधिक क्या लिखूँ ! मैं स्वयं उसका शरण में हूँ। तभी मेरा भी 'कल्याण' होगा। बकने से तथा दूसरों के उपदेश से नहीं—क्योंकि—यदि मैं स्वयं कुछ न कर सका, तो मेरी भी यह 'गपोड़बाजी' ही रहेगी।



साधन-माला

भगवान् श्रीकृष्ण ने 'गीता' में चार प्रकार के भक्त बताए हैं— १ आर्त, २ जिज्ञासु, ३ अर्थार्थी और ४ ज्ञानी । इन चार प्रकार के भक्तों में 'ज्ञानी' का पद सबसे उत्तम है, तथापि अन्य तीन प्रकार के भक्त भी 'भक्त' ही माने गए हैं ।

'चण्डी' के नए ५१ वें वर्ष के उपलक्ष्य में प्रकाशित साधन-माला स्तम्भ के अन्तर्गत, हम आर्त एवं अर्थार्थी भक्तों के लिए कल्याण-प्रद आध्यात्मिक प्रयोग, विधि-सहित प्रकाशित कर रहे हैं ।

जिस प्रकार कोई मनुष्य प्यासा हो, भूखा हो, वस्त्र-हीन हो और वह जल, अन्न एवं वस्त्र के अभाव में अत्यन्त दुःखित हो, तब यदि कोई सहृदय व्यक्ति उसे अन्न या वस्त्र देने की उदारता दिखाए, तो क्या वह त्रस्त मनुष्य सर्व-प्रथम अन्न या वस्त्र ग्रहण करेगा ? नहीं वह तो सर्व-प्रथम उस उदार महानुभाव से पानी के लिए ही प्रार्थना करेगा । हाँ, तत्-पश्चात् क्रमशः अन्न और वस्त्र लेना भी स्वीकार करेगा । यह बात ठीक भी है, क्योंकि यही क्रमोन्नति है ।

अतः आर्त और अर्थार्थी भक्त भी ज्ञान-प्राप्ति के अधिकारी बनने के पहले, अपने शरीर और तत्सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण करने की अभिलाषा रखते हुए ही भगवान् की 'भक्ति' करना स्वीकार करेंगे, अन्यथा नहीं, क्योंकि उनके लिए यही क्रमोन्नति है ।

ऐसे ही 'स-काम' जिज्ञासुओं के लाभार्थ, हमारे वेदादि शास्त्रों में कर्म-काण्ड के रूप में अनेकानेक उपायों का वर्णन मिलता है । 'हिन्दू-धर्म' के 'कर्म-काण्ड'-रूपी इस समुद्र की कुछ 'बूँदें' प्रस्तुत 'साधन-माला' स्तम्भ के अन्तर्गत यहाँ आपके समक्ष प्रस्तुत हैं । आशा है, भक्त-गण इनसे लाभ उठाएँगे ।

—सम्पादक



साधना-योग्य शरीर हेतु अनुभूत प्रयोग

“...आध्यात्मिक साधना में सफलता पाने के लिए शरीर पहला प्रमुख साधन है। यदि शरीर ही साधक का साथ नहीं देगा, तो अन्य साधनों—पूजोपकरणों आदि का क्या भरोसा ! अतः शरीर को स्वस्थ एवं प्रकृतिस्थ रखना साधक के लिए परमावश्यक है। इस सम्बन्ध में एक आयुर्वेद - मर्मज्ञ के प्रयोग प्रस्तुत हैं, जिनके अनुसार चलकर आध्यात्मिक साधना के इच्छुक बन्धु अपने शरीर को साधना-योग्य बनाए रख सकते हैं।...”

(१) प्रातः उठकर भूमि के चरण-स्पर्श करें और दाँतों की दाँती जोर से पीसें। ऐसा करने से दाँत कभी भी नहीं उखड़ते और सुरक्षित रहते हैं। (२) ठण्डे पानी को मुख में भर कर, उसके छींटे आँखों में दें। या बासी थूक अँगुली से आँखों में लगावें। बाद को शौच जावें। (३) शौच जाने से पूर्व शीतल जल (बासी पानी) छः चुल्लू पीवें। यह ‘उषः-पान’ कहलाता है। ऐसा करने से पाखाना साफ आता है। (४) शौच होने के बाद ‘गुदा’ को अँगुली द्वारा साफ करें। ऐसा करने से ‘गुदा के रोगों’ (अर्श एवं कृमि-रोग) से छुटकारा मिलता है। आस-पास के ‘बलिकों’ को दबाना ठीक रहता है। (५) इसी समय इन्द्रिय को भी स्नान कराकर साफ रखें। ऐसा करने से ‘धातु - स्राव’ (शुक्र-रोग—‘प्रमेह’ आदि) नहीं होता। यह ‘शिशन-स्नान’ कहलाता है।

(६) इसके बाद हाथ-पाँव धोकर, मञ्जन कर, १५ बार कुल्ली करें, ताकि तालु से चिपटा हुआ कफ निकल जावे। इससे ‘स्वर’ शुद्ध होता है और ‘नेत्र-ज्योति’ बढ़ती है। (७) फिर व्यायाम या ‘सूर्य-प्रणाम’ करें। कम-से-कम १२ बार। इससे रीढ़ की हड्डी सीधी रहने से आरोग्यता में सहायता मिलती है। हर समय इसका ध्यान रखें। लेटते समय भी चित्त होकर, पैरों पर तनाव देकर, कमर को ऊपर की तरफ कर, सीधा करना सीखें। यह विधि बड़ी सुन्दर एवं उपयोगी है। (८) फिर तेल लगा नाक में ६-६ बूँद, कान में ६-६ बूँद तेल डालें। तालु, नाभि, अँगुलियों के बीच, तलवों पर भी तेल - मर्दन करें और सर्वाङ्ग में भी। (९) बाद को ठण्डी देह कर स्नान करें। (१०) स्नान के समय में भीगे तौलिए से, नाभि के नीचे पेड़ू को ७ बार धीमे से मलना

चाहिए क्योंकि 'रोगोत्पादक मल' यहीं जमा होते हैं। स्नान के बाद देह को खुरदरे तौलिए से रगड़ना चाहिए तथा स्वच्छ वस्त्रादि पहन कर 'पूजा-पाठ' करे और धूप, दीप, नैवेद्य दें। धूप देने से वायु शुद्ध होती है।

बिना चन्दन लगाए जप-तप, देव-पूजन व्यर्थ होता है। ब्राह्मण को ऊर्ध्व त्रिपुण्ड, अर्ध-चन्द्र वैश्य को और शूद्र को वर्तुल (गोल) बिन्दी लगाना चाहिए। प्रकृति ने तीन धाराएँ ललाट पर रखी ही हैं। अतः त्रिपुण्ड (चन्दन) लगाना जरूरी है। चन्दन मलयागिरि न हो, तो गोपीचन्दन और कुछ न मिले तो मिट्टी से—राख से ही त्रिपुण्ड लगावें। चन्दन से माथा साफ रहता है, रोम विलय होते हैं। चन्दन से आत्मा आह्लादित रहती है। विशेष बात गोप्य यह है कि चन्दन लगा 'ॐ' या 'ह्रीं' लिखने से कोई कीट-पतङ्ग बदन पर चोट नहीं करते, न सर्पादि जङ्गली जानवर। सर्प-दंष्ट रोगी के बदन पर 'ॐ' और 'ह्रीं' लिख देने से सर्प-विष नष्ट हो जाता है।

रुद्राक्ष की माला पहिनने से चेचक, विस्फोट, रक्त-दोष नहीं होते। अतः माला ऐसी पहिने कि चमड़ी से लगती रहे और पसीने से तर हो रोम - कूपों के द्वारा प्रवेश करती रहे। एक हजार रुद्राक्ष धारण करनेवाला साक्षात् शङ्कर-रूप में रहता है। बिना रुद्राक्ष-धारण के जप, तप, पूजन व्यर्थ ही होते हैं। चेचक एवं पाप-रोग (कुष्ठादि) नष्ट हो जाते हैं। रुद्राक्ष को गङ्गा-जल में घिसकर पिलाने से चेचक रोग दूर होता है।

(११) स्नान के बाद भोजन के समय, भगवान् को भोजन का अंश भावना द्वारा अर्पित कर, उनके प्रसाद-रूप में भोजन करना चाहिए। ऐसा करने से भोजन का दोष, शरीर को हानि नहीं पहुँचाता। (१२) भोजन के बाद पेट पर हाथ फेरते हुए कहें—
अगस्त्यं कुम्भ-कर्णं च, हनुमन्तं बड़वानलं । भोजनं परिपाकार्थं, भीमसेनं स्मराम्यहम् ॥

(१३) भोजन कर मूत्र-विसर्जन अवश्य करें। ऐसा करने से 'मूत्र-रोग' कभी नहीं होते। भोजन कर बैठे रहने से कोष्ठ-बद्धता, लीवर, प्लोहा और आन्त्र-विकार घेर लेते हैं। अतः चित्त ८ श्वास, दाहिने १६, बाँएँ ३२ श्वास अवश्य लेना चाहिए। (१४) सोते समय आँखों में कर्ण-गूथ (ठूँठ) लगावें। इससे 'दृष्टि-दोष' दूर हो, 'नेत्र - ज्योति' तीव्र होती है। चश्मा लगाने की आदत छूट जाती है। (१५) शिर को ढँककर ही मल-मूत्र का त्याग करना चाहिए। कान पर यज्ञोपवीत रखकर मल - मूत्र त्याग करना विज्ञान-सम्मत बात है—मल-मूत्र त्याग करते समय देह की ऊष्मा मल-मूत्र के द्वारा निकलती है और बाहर की हवा का दबाव पड़ने से शरीरोष्मा कम हो जाती है, ऊष्मा की क्षीणता से अनेक रोग पैदा होते हैं।

—'बैद्य-राज' पण्डित विश्वेश्वरदयाल जी

(२)

नित्य-कर्म

[सभी प्रकार की 'साधना' की सफलता नित्य-कर्मों पर निर्भर है । प्रत्येक साधक को पूर्ण अनुशासन के साथ अपने नित्य-कर्मों को सम्पन्न करना चाहिए । हिन्दुओं का नित्य-कर्म प्रातःकाल निद्रा टूटने के बाद 'प्रातः-कृत्य' से प्रारम्भ हो जाता है । यहाँ 'प्रातः-कृत्य' का एक अत्यन्त लघु क्रम प्रस्तुत है । जो पाठक-बन्धु 'प्रातः-कृत्य' न करते हों, वे इससे लाभ उठा सकते हैं । आगे 'प्रातः-कृत्य' के अन्य क्रमों एवं नित्य-कर्म के अन्य अङ्गों के विषय में प्रकाश डाला जाएगा ।-सं०]

प्रातः-काल निद्रा टूटने के बाद मन को प्रफुल्लित करने के लिए पुण्यवान् व्यक्तियों, मङ्गल-मय पदार्थों का नाम लेकर स्मरण करना चाहिए । मन के उदास होने एवं प्रेरणा-शून्य होने से, उसे कार्य करने में आवश्यक उत्साह नहीं होता । अतः निद्रा समाप्त होते ही देवताओं और ऋषियों आदि के नामों का अवश्य स्मरण करे । यथा—

(१) प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं, दुर्गा दुर्गाक्षर-द्वयम् ।

आपदस्तस्य नश्यन्ति, तमः सूर्योदये यथा ॥

अर्थात् जो प्रति-दिन प्रातः-काल 'दुर्गा' 'दुर्गा' 'दुर्गा' 'दुर्गा' 'दुर्गा' इस दो अक्षरवाले दुर्गा-नाम को स्मरण करता है, उसकी सभी आपत्तियाँ उसी प्रकार नष्ट हो जाती हैं, जैसे सूर्य के उदय होने से अन्धकार दूर हो जाता है ।

(२) हरे मुरारे मधु-कैटभारे, गोपाल गोविन्द मुकुन्द शौरे ।

यज्ञेश नारायण कृष्ण विष्णो, निराश्रयं मां जगदीश ! रक्ष ॥

अर्थात् हे हरि ! हे मुरारि ! हे मधु-कैटभ के अरि ! हे गोपाल ! हे गोविन्द ! हे मुकुन्द ! हे शौरि (वसुदेव के पिता का नाम शूर था, उनके वंशज अर्थात् 'कृष्ण' 'शौरि' कहलाते हैं) ! हे यज्ञेश्वर ! हे नारायण ! हे कृष्ण ! हे विष्णु ! हे जगदीश्वर ! मुझ आश्रय-हीन की रक्षा करो ।

(३) ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्त-कारी, भानुः शशो भूमि-सुतो बुधश्च ।

गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः, कुर्वन्तु सर्वे मम सु - प्रभातम् ॥

अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु—ये सब मेरे प्रातः-काल को मङ्गल-मय करने की कृपा करें ।

(४) अहल्या द्रौपदी कुन्ती, तारा मन्दोदरी तथा ।

पञ्च - कन्या स्मरेन्नित्यं, महा-पातक-नाशनम् ॥

अर्थात् १ अहल्या, २ द्रौपदी, ३ कुन्ती, ४ तारा और ५ मन्दोदरी—इन पाँच कन्याओं का प्रति-दिन स्मरण करने से महा-पाप का नाश होता है ।

(५) ॐ कराग्रे वसते लक्ष्मीः, कर-मध्ये सरस्वती ।

कर-मूले महा-काली, प्रभाते कर - दर्शनम् ॥

अपने दाहिने हाथ की हथेली को देखते हुए उपर्युक्त श्लोक पढ़ें और शय्या का त्याग करें । अर्थ यह है कि हाथ के अगले भाग में लक्ष्मी, मध्य में सरस्वती और कलाई में महा-काली निवास करती हैं । अतः मैं प्रातःकाल इस प्रकार के हाथ का दर्शन करता हूँ ।



(३)

शान्ति-कर्म

‘शान्ति-कर्म’ वे प्रयोग हैं, जिनसे ग्रहों के दोषों का निवारण होता है; भूत - प्रेत आदि अदृष्ट उपद्रवों का शमन होता है एवं रोग, दुर्घटना, शत्रुता आदि अनिष्टों से रक्षा होती है ।

कलि-युग में चार प्रकार के मुख्य ‘शान्ति-कर्म’ प्रशस्त और अनुभूत हैं । यथा—

१. चण्डी या श्रीदुर्गा-सप्तशती का पाठ, २. दुर्गा - नाम - जप, ३. पार्थिव शिव - पूजन, ४. हरि-नाम-कीर्तन (विष्णु सहस्र-नामादि) —

पठेच्चण्डीं जपेद् दुर्गां, पूजयेत् पार्थिवं शिवम् ।

कारयेद्द्वारि - नामानि, कलौ काम्यं चतुष्टयम् ॥

अर्थात् कलि-युग में १. चण्डी-पाठ, २. दुर्गा-नाम-जप, ३. पार्थिव शिव-पूजन एवं ४. हरि-नाम-कीर्तन—इन चार प्रकार के काम्य - अनुष्ठानों से मनुष्यों की समस्त आपत्तियों को शान्ति होती है । इन चारों काम्य-अनुष्ठानों के लिए आवश्यक ‘सङ्कल्प’ निम्न प्रकार करने चाहिए—

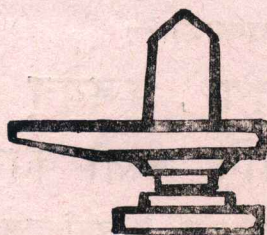
१. चण्डी-पाठ का संकल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः तत्-सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि, द्वितीय - प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तेक-देशान्तर्गते, पुण्य-क्षेत्रे, कलि - युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्बत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्मा मम (अमुक-गोत्रस्य अमुक-नाम-शर्मणः वा) सर्वापिच्छान्ति-पूर्वकं झटिति मनोऽभीष्ट-सिद्धि-कामः (रोगादि-पक्षे—गोचर-विलग्नादि-स्थानावस्थित-रव्यादि-नव-ग्रह-संसूचित-संसूच्यमान-संसूचयिष्यमान-सर्वारिष्ट-प्रशमन-पूर्वक-जीव-वदेतत्-स्थूल-शरीर-विरोधेनोत्पन्नामुक-रोगाणां झटिति प्रशमन-कामः) महर्षि वेदव्यास-प्रोक्त-‘जयाख्य’-मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत—‘मार्कण्डेय उवाच । सार्वणिः सूर्य-तनयो यो मनुः कथ्य-तेऽष्टमः’ इत्यादि ‘एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः, सूर्याज्जन्म समासाद्य सार्वणि-र्भविता मनुः’ इति ‘मार्कण्डेय-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये देवी-माहात्म्यं समाप्तं’ इत्यन्तस्य देवी-माहात्म्यस्य एकावृत्तिः (त्रिरावृत्तिः वा) पाठ-कर्माहं करिष्यामि ।



२. श्रीदुर्गा-मन्त्र-जप का संकल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः तत्-सदद्य इत्यादि श्रीदुर्गा-प्रीति-कामः अष्टोत्तर-शत-संख्यक (अष्टोत्तर-सहस्र-संख्यकं वा) ‘ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहे’ति मन्त्रस्य जपमहं करिष्यामि ।



३. पार्थिव-शिव-पूजा का संकल्प

ॐ त्रिष्णुः विष्णुः... इत्यादि शिव-लिङ्गाधिकरणक-शिव-प्रीति-कामः इयत्-संख्यक-पार्थिव-शिव-लिङ्ग-पूजनमहं करिष्यामि । जप-मन्त्र : ॐ नमः शिवाय [‘ॐ हौं जूं सः’ वा]

४ तुलसी-पत्र-दान का संकल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः.....इत्यादि श्रीविष्णु-प्रीति-कामः 'ॐ नमस्ते बहु-रूपाय विष्णवे परमात्मने स्वाहे'ति मन्त्रेण अष्टोत्तर-संख्यक [यदृच्छा-दान-संख्यकं वा] स-चन्दन-तुलसी-पत्र-दानमहं करिष्यामि ।

५ मधुसूदन-मन्त्र-जप का संकल्प

ॐ विष्णुः विष्णुः.....इत्यादि श्रीविष्णु-प्रीति-कामः अष्टोत्तर-शतं [यदृच्छ-संख्यकं वा] 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाये'ति मन्त्रस्य जपमहं करिष्यामि ।

'सङ्कल्प' के जो उदाहरण ऊपर दिए गए हैं, उनसे उनके स्वरूप का ज्ञान हो जाता है । साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि 'सङ्कल्प' करना कितना आवश्यक है क्योंकि 'काम्य कर्म' कौन कर रहा है, कब कर रहा है, क्या कर रहा है और किस उद्देश्य से कर रहा है—इस सबका उल्लेख 'कर्म' के प्रारम्भ में करना अति आवश्यक है । स्थान, सम्बत्सर, मास, तिथि आदि परिवर्तन-शील हैं, अतः श्री गुरु-देव या मार्ग - दर्शक से 'सङ्कल्प' के प्रारूप को समुचित रूप में जान लेना चाहिए ।

—प० पू० स्वामी श्री हिमालय अरण्य की कृपा से प्राप्त



(४)

सर्व-संकट-हारी-प्रयोग

सर्वा बाधासु घोरासु, वेदनाभ्यर्दितोऽपि ।

स्मरन् ममैच्चरितं, नरो मुच्यते संकटात् ॥

ॐ नमः शिवाय ।

उपर्युक्त मन्त्र से 'सप्त-श्लोकी दुर्गा' का एकादश अर्थात् ११ बार 'सम्पुट - पाठ' करने से सब प्रकार के सङ्कटों से छुटकारा मिलता है । प्रत्येक 'पाठ' करने के बाद उक्त 'सम्पुट-मन्त्र' के अन्त में 'स्वाहा' जोड़कर एकादश अर्थात् ११ बार निम्न-लिखित वस्तुओं से हवन करे—

१ अर्जुन की छाल का चूर्ण, २ गाय का घी, ३ शुद्ध शहद, ४ मिश्री और ५ खीर—यह सब मिलाकर रख लें और उसी से हवन करें। 'खीर' बनाने के लिए सायं-काल 'चावल' को जल में भिगो दें। प्रातः जल गिराकर भीगे हुए चावलों को गाय के शुद्ध घी से भून लें। चावल हल्का लाल भूनने के बाद उसमें आवश्यकतानुसार चीनी, पञ्च-मैवा, गाय का दूध डालकर पकावें। जब गाय का दूध पककर सूख जावे, तब 'खीर' को उतार लें और ठण्डी कर उपर्युक्त ४ वस्तुओं के साथ मिला कर रखें।



(५)

सर्वाभीष्ट-प्रद प्रयोग

'कुमारी-पूजन' का प्रस्तुत प्रयोग अनुभूत सिद्ध प्रयोग है। सभी प्रकार की कामनाओं की पूर्णता इस 'प्रयोग' द्वारा सम्भव है।

[१] पहले सङ्कल्प करे। यथा—ॐ तत् सत्। अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्धे, श्री श्वेत-वाराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, अमुक - प्रदेशान्तर्गते, अमुक पुण्य-क्षेत्रे, कलि-युगे, कलि-प्रथम-चरणे, अमुक-नाम-सम्बत्सरे, अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्रोत्पन्नो, अमुक-नाम-शर्माऽहं [वर्माऽहं, दासोऽहं वा], सर्वा-पत्-शान्ति-पूर्वक ममाभीष्ट-सिद्धये, गणेश-वटुकादि-सहितां कुमारी-पूजां करिष्ये।

[२] फिर 'गं गणपतये नमः' मन्त्र से भगवान् गणेश का पूजन करे। यथा—१ गं गणपतये नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि। २ गं गणपतये नमः शिरसि अर्घ्यं समर्पयामि। ३ गं गणपतये नमः गन्धाक्षतं समर्पयामि। ४ गं गणपतये नमः पुष्पं समर्पयामि। ५ गं गणपतये नमः धूपं द्रापयामि। ६ गं गणपतये नमः दीपं दर्शयामि। ७ गं गणपतये नमः नैवेद्यं समर्पयामि। ८ गं गणपतये नमः आचमनीयं समर्पयामि। ९ गं गणपतये नमः ताम्बूलं समर्पयामि। १० गं गणपतये नमः दक्षिणां समर्पयामि।

[३] भगवान् गणेश की पूजा करने के बाद 'ॐ वं वटुकाय नमः' मन्त्र से भगवान् वटुक का पूजन करे। यथा—१ ॐ वं वटुकाय नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि। २ ॐ वं वटुकाय नमः शिरसि अर्घ्यं समर्पयामि। ३ ॐ वं वटुकाय नमः गन्धाक्षतं समर्पयामि। ४ ॐ वं वटुकाय नमः पुष्पं समर्पयामि। ५ ॐ वं वटुकाय नमः धूपं द्रापयामि। ६ ॐ वं वटुकाय नमः दीपं दर्शयामि। ७ ॐ वं वटुकाय नमः नैवेद्यं समर्पयामि। ८ ॐ

वं वटुकाय नमः आचमनीयं समर्पयामि । ६ ॐ वं वटुकाय नमः ताम्बूलं समर्पयामि ।
१० ॐ वं वटुकाय नमः दक्षिणां समर्पयामि ।

[४] तब 'कुमारी-पूजन' करे । 'कुमारी' के पैर धोकर उसे प्रेम - पूर्वक अपने सम्मुख 'आसन' पर बैठाए । फिर दोनों हाथ जोड़कर भक्ति-पूर्वक ध्यान करे । यथा—

बाल - रूपां च त्रैलोक्य - सुन्दरीं वर-वर्णिनीम् ।

नानालङ्कार - नम्राङ्गीं, भद्र-विद्या-प्रकाशिनीम् ॥

चारु - हास्यां महाऽऽनन्द - हृदयां चिन्तये शुभाम् ॥

अर्थात् बाल-स्वरूपवाली, त्रिलोक - सुन्दरी, श्रेष्ठ वर्णवाली, विविध प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित होने से विनम्र शरीरवाली, कल्याण-कारिणी विद्या को प्रकट करनेवाली, सुन्दर हँसी हँसनेवाली, परमानन्द से युक्त हृदयवाली कल्याणकारिणी कुमारी देवी का मैं ध्यान करता हूँ ।

'ध्यान' करने के बाद निम्न-लिखित मन्त्र श्रद्धा-पूर्वक पढ़कर 'आवाहन' करे—

ॐ मन्त्राक्षर-मयीं लक्ष्मीं, मातृणां रूप-धारिणीम् ।

नव-दुर्गात्मिकां साक्षात्, कन्यामावाहयाम्यहम् ॥

अर्थात् मन्त्राक्षरों से संयुक्ता, लक्ष्मी-स्वरूपा, मातृकाओं का रूप धारण करने-वाली, साक्षात् नव-दुर्गा-स्वरूपा कन्या देवी का मैं आवाहन करता हूँ ।

'आवाहन' करने के बाद, सम्मुख उपस्थित 'कुमारी' का पाद्य, अर्घ्य, गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल एवं दक्षिणा आदि उपचारों से 'पूजन' करे । 'कुमारी' का 'पूजन' करने के बाद निम्न मन्त्र पढ़ते हुए दण्ड-वत् प्रणाम करे—

जगद्-वन्द्ये, जगत् - पूज्ये, सर्व - शक्ति - स्वरूपिणि !

पूजां गृहाण कौमारि ! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ॥

अर्थात् हे विश्व-वन्द्ये, संसार-पूज्ये, सर्व-शक्ति-स्वरूपे कौमारि देवि ! मेरी पूजा स्वीकार करिए । हे जगदम्ब ! आपको नमस्कार ।

[५] 'कुमारी-पूजा' के बाद 'श्रीदुर्गा-अष्टोत्तर-शत-नाम' स्तोत्र का पाठ करे ।

विशेष : उपर्युक्त विधि से मास में एक बार 'कुमारी - पूजन' करे । कुमारियाँ विषम-संख्यक (१, ३, ५, ७, ९, ११, १३ या १५) होनी चाहिए ।



(६)

योग्य वर-प्राप्ति का प्रयोग

कात्यायनि ! महा-माये ! महा-योगिन्यधीश्वरि !
नन्द-गोप-सुतं देवि ! पतिं मे कुरु ते नमः ॥

जो कन्या योग्य वर चाहती हो, वह इस मन्त्र का जप-अनुष्ठान करे ।

स्नान कर, पवित्र वस्त्र धारण कर, प्रातः-सायं दोनों समय जप करे । प्रत्येक बैठक में कम-से-कम तीन माला अर्थात् एक दिन में छः माला 'जप' करना चाहिए । मालाओं का लेखा (हिसाब) रखना चाहिए । जब एक लाख 'जप' हो जाए, तब किसी शुक्रवार अथवा अन्य शुभ दिवस को माता गौरी (पार्वती) का पूजन कर, ब्राह्मणों व अनार्यों को भोजन कराना चाहिए । प्रत्यक्ष देवी-स्वरूपा कन्याओं का भी पूजन-अर्चन कर, उन्हें वस्त्रादि देकर सन्तुष्ट करना चाहिए ।



(७)

सन्तान-प्राप्ति-प्रयोग

देवकी-सुत गोविन्द, वासुदेव जगत्पते !

देहि मे तनयं कृष्ण ! त्वामहं शरणं गतः ॥

पति-पत्नी दोनों ही इस मन्त्र का जप कर सकते हैं । पत्नी जब इस मन्त्र का जप करे, तो अन्तिम शब्द 'गतः' के स्थान में 'गता' उच्चारण करे ।

स्नानादि कर, पवित्र वस्त्र धारण कर, प्रातः-सायं दोनों समय जप करना चाहिए । एक बैठक में कम-से-कम तीन माला अवश्य जप करना चाहिए । जब एक लाख जप हो जाए, तब पूर्णाहुति (१०००) करनी चाहिए । 'हवन' कर ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए । कुमार-बटुकों को प्रसाद-वस्त्रादि वितरण करना चाहिए ।

जप का लेखा—१०८ मणियों की माला अर्थात् १०८ जप, प्रति माला । प्रति-दिन ६ माला = $१०८ \times ६ = ६४८$ जप प्रति - दिन । $६४८ \times ३० = १९,४४०$ जप प्रति मास । इस प्रकार एक लाख 'जप', प्रायः ५ मास ५ दिनों में समाप्त हो सकते हैं ।

(८)

गप-शप विष-हर प्रयोग

श्री राम राम रामेति, रमे रामे मनोरमे ।

सहस्र-नाम तत्-तुल्यं, राम-नाम वरानने ॥

यह 'मन्त्र', 'गप-शप' के दोष को निवारण करनेवाला है । जब आपको ऐसा प्रतीत हो कि आपने 'गप-शप' में अपना समय नष्ट किया है, तो आप इस 'मन्त्र' का कई बार 'जप' कीजिए । आप अपने विनष्ट समय की पूर्ति करने में समर्थ होंगे ।



(९)

दीर्घ आयु, सुख-शान्ति हेतु प्रयोग

ॐ त्वम्बकं यजामहे, सुगन्धि पुष्टि-वर्धनम् ।

उर्वारुकमिव बन्धनात्, मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

अर्थात् हम भगवान् शिव की आराधना करते हैं, जो सुगन्धित (सु-वासित) हैं तथा जो सब प्राणियों का भरण-पोषण करते हैं । अमरत्व-प्राप्ति के हेतु भगवान् शिव हमें मृत्यु से मुक्त करें, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि पका हुआ खीरा लता से टूट कर गिर पड़ता है और मुक्त हो जाता है ।

यह जीवन या आयुष्य प्रदान करनेवाला 'मन्त्र' है । आजकल जब जीवन अत्यन्त जटिल हो गया है, आकस्मिक दुर्घटनाएँ प्रति-दिन होती रहती हैं, तब यह 'मन्त्र'—सर्प-दंशन, बिजली, अग्नि, वायु, जल, वाहन आदि द्वारा होनेवाली दुर्घटनाओं में मृत्यु से रक्षा करता है । इसके अतिरिक्त यह आरोग्य प्रदान करने का अति प्रभाव-शाली 'मन्त्र' है ।

इस मन्त्र का श्रद्धा, प्रेम और यथार्थ रूप से 'जप' किया जाए, तो इससे वे भयङ्कर रोग भी दूर हो जाते हैं, जिन्हें वैद्यों व चिकित्सकों ने असाध्य घोषित कर दिए हैं । संक्षेप में यह रोगों का हनन करनेवाला, मृत्यु पर विजय प्राप्त करानेवाला, दीर्घायु, शान्ति, ऐश्वर्य, पुष्टि, तुष्टि और मोक्ष प्रदान करानेवाला भगवान् शिव का मन्त्र है ।

अपने जन्म-दिवस के शुभ अवसर पर, आप उक्त मन्त्र का एक लाख अथवा कम-से-कम पचास हजार जप करें । फिर 'हवन' कर, ब्राह्मण, दरिद्र - नारायण, वटुक को भोजमादि दीजिए । आगे एक माला नित्य-प्रति 'जप' कर अपने 'इष्ट-देव' या 'गुरु-देव' को अर्पित किया करें । इससे आपको दीर्घ आयु की प्राप्ति होगी तथा आप सुख-शान्ति जीवन-यापन करने में समर्थ होंगे ।

—ब्रह्म-लीन स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती



(१०)

परीक्षा में सफलता, स्मरण-शक्ति-वर्द्धन प्रयोग

ॐ एक-दन्त महा-बुद्धिः, सर्व-सौभाग्य-दायकः ।

सर्व-सिद्धि-करो देवो, गौरी-पुत्र विनायकः ॥

[१] इस 'मन्त्र' का जप 'परीक्षा' आरम्भ होने के १५ दिन पहले जो बुधवार पड़े, उस दिन से आरम्भ करे तथा 'परीक्षा' का परिणाम निकलने तक नियमित करे ।

[२] नित्य स्नान कर, शुद्ध वस्त्र पहनकर, 'कुश' या 'कम्बल' के आसन पर पूर्वाभिमुख बैठे । सम्मुख स्थित भगवान् गणेश जी के 'चित्र' या 'मूर्ति' में पहले 'आवाहन' करे—

आगच्छ देव - देवेश ! तेजो-राशे गण-पते !

क्रियमाणां मया पूजां, गृहाण सुर - सत्तम !

॥ श्रीमद्-गणपति-देवं आवाहयामि ॥

अर्थात् हे देवताओं के ईश्वर ! तेज-सम्पन्न हे संसार के स्वामिन् ! हे देवोत्तम, आइए, मेरे द्वारा की जानेवाली पूजा को स्वीकार करिए ।

मैं भगवान् श्रीगणेश का आवाहन करता हूँ ।

[३] फिर भगवान् गणेश का पीले पुष्प, अक्षत, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य (लड्डू), दक्षिणा आदि से पूजन करे और दो अगरबत्ती जलाकर उपर्युक्त 'मन्त्र' का १०८ बार 'जप' करे । 'जप' के समय बाँए हाथ की तर्जनी अँगुली के अग्र-भाग (नख के सामनेवाला भाग) तथा अँगूठे के अग्र-भाग को मिलाए, हाथ को घुटने के ऊपर रखे तथा अँगुलियों का मुख ऊपर की ओर करे । दाहने हाथ द्वारा 'कर-माला' या 'रुद्राक्ष-माला' में जप करे ।

[४] परीक्षा-भवन में जब प्रश्न-पत्र मिले, तब प्रश्न-पत्र पढ़ने के पहले और प्रश्नों का उत्तर लिखने से पूर्व, भगवान् गणेश का ध्यान कर पाँच बार मन-ही-मन उपर्युक्त 'मन्त्र' जपे ।



(११)

रोग, उपद्रव की शान्ति हेतु सप्तशती-प्रयोग

विनियोग—ॐ अस्य श्री 'शरणागत-दीनार्त' इति मन्त्रस्य श्रीवह्नि-पुरोगमा-ब्रह्मा-दयो सेन्द्रा सुराः ऋषयः, श्रीमहा-काली देवता, ग्लौं वीजं, श्रीछाया शक्तिः, श्रीकाल्यादिः दश-महा-विद्याः, तमो-गुण-प्रधाना त्रिगुणाः, श्रोतृ-प्रधान-पञ्च-ज्ञानेन्द्रियाणि, शान्तः रसः, कर - प्रधाना पञ्च - कर्मेन्द्रियाणि, स्तवनं स्वरः, पञ्च तत्त्वानि, पञ्च कलाः, ऐं ह्रीं श्रीं उत्कीलनं, स्तवनं मुद्रा, मम क्षेम - स्थैर्यायुरारोग्याभि - वृद्धयर्थं श्रीजगदम्बा-योग-माया-भगवती-दुर्गा-प्रसाद-सिद्धयर्थं च नमो-युत-प्रणव-वाग्-वीज-स्व-वीज-लोम-विलोम-पुटितोक्त मन्त्र-जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीवह्नि-पुरोगमा-ब्रह्मादि-सेन्द्र-सुर-ऋषिभ्यो नमः सहस्रारे—शिरसि, श्रीमहा-काली-देवतायै नमः द्वादशारे—हृदि, ग्लौं - वीजाय नमः षडारे—लिङ्गे, श्रीछाया-शक्त्यै नमः दशारे—नाभौ, श्रीकाल्यादि-दश-महा-विद्याभ्यो नमः षोडशारे—कण्ठे, तमो-गुण-प्रधान-त्रिगुणेभ्यो नमः अन्तरारे—मनसि, श्रोतृ-प्रधान-पञ्च-ज्ञानेन्द्रियेभ्यो नमः ज्ञानेन्द्रिये, शान्त-रसाय नमः चेतसि, कर-प्रधान-पञ्च-कर्मेन्द्रियेभ्यो नमः कर्मेन्द्रिये, स्तवन-स्वराय नमः कण्ठ-मूले, पञ्च-तत्त्वेभ्यो नमः गुदे—चतुरारे, पञ्च-कलाभ्यो नमः कर - तले, ऐं ह्रीं श्रीं उत्कीलनाय नमः पादयोः, स्तवन-मुद्रायै नमः सर्वाङ्गे, मम-क्षेम-स्थैर्यायुरारोग्याभि-वृद्धयर्थं श्रीजगदम्बा-योग-माया-भगवती-दुर्गा-प्रसाद-सिद्धयर्थं च नमो-युत-प्रणव-वाग्-वीज-स्व-वीज-लोम-विलोम-पुटितोक्त मन्त्र-जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास

ॐ ऐं ग्लौं

नमो नमः

शरणागत-दीनार्त

कर-न्यास

अंगुष्ठाभ्यां नमः

तर्जनीभ्यां स्वाहा

मध्यमाभ्यां वषट्

अङ्ग-न्यास

हृदयाय नमः

शिरसे स्वाहा

शिखायै वषट्

परित्वाण-परायणे !	अनामाभ्यां हं	कवचाय हं
सर्वस्यार्ति-हरे देवि !	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
नारायणि ! नमोऽस्तु ते	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्
ध्यान—	बालार्का बाल-रूपा च, त्रिशूल-वर-धारिणी ।	
	माहेश्वरी-स्वरूपेण, कालिकां प्रणमाम्यहम् ॥	

मानस-पूजन— १ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीमहा - काली - श्रीपादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि (अधोमुख - कनिष्ठांगुष्ठ - मुद्रा) । २ हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीमहा-काली-श्रीपादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि (अधोमुख-तर्जनी-अंगुष्ठ-मुद्रा) । ३ यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीमहा-काली-श्रीपादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि (ऊर्ध्व-मुख-तर्जनी-अंगुष्ठ-मुद्रा) । ४ रं वह्न्यात्मकं दीपं श्रीमहा-काली-श्रीपादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि (ऊर्ध्व-मुख-मध्यमा-अंगुष्ठ-मुद्रा) । ५ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीमहा-काली-श्रीपादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि (ऊर्ध्व-मुख-अनामा-अंगुष्ठ-मुद्रा) । ६ शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्रीमहा-काली-श्रीपादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि (ऊर्ध्व-मुख-सर्वांगुलि-मुद्रा) ।

ॐ ऐं ग्लौं नमः शरणागत-दीनार्त-परित्वाण-परायणे !

सर्वस्यार्ति-हरे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते नमो ग्लौं ऐं ॐ ॥

विधि— नित्य 'सङ्कल्प' कर, भगवती काली का पञ्चोपचार पूजन करे । फिर उपर्युक्त 'मन्त्र' का १००० बार 'जप' करे । 'जप' की प्रथम और अन्तिम आवृत्ति में विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, षडङ्ग-न्यास, मानस-पूजन करे । 'जप' के बाद १०० आवृत्ति 'हवन' करे । हविष्य घी (गो-घृत) मिलाकर या केवल पेड़ा से करे । 'हवन' के बाद १० आवृत्ति 'तर्पण', 'मार्जन' करे । यह दस दिनों का प्रयोग है । तीन, पाँच या सात दिनों में भी 'प्रयोग' किया जा सकता है ।

अत्यावश्यक रूप में, एक ही दिन में, तीन या पाँच ब्राह्मणों द्वारा पूजन आदि कराकर 'जप' कराया जा सकता है ।

प्रयोग के अन्त में सात या नौ वर्ष की कुमारी कन्याओं के साथ आठ वर्ष के बटुक (बालक) को भोजन मिष्ठान्न-सहित करावे तथा यथा - शक्ति दक्षिणा देकर उन्हें प्रणाम कर विदा करे ।

पण्डित कपिलनारायण मिश्र, भोजपुर-आरा, बिहार



सामाजिक प्रयोग

अनावृष्टि-निवारक प्रयोग

वृष्टि अर्थात् वर्षा के न होने से सूखा पड़ता है और देश अकाल के सङ्कट में फँस जाता है । इस विपत्ति से बचने के लिए तीन 'आध्यात्मिक प्रयोग' यहाँ प्रस्तुत हैं—

[१] पहले 'स्वस्ति-वाचन' (देखिए, पुस्तक 'दीपावली की पूजा - विधि', पृ० २४) करे । फिर अच्छी वर्षा हेतु पञ्च-देवताओं (१ गणेश, २ सूर्य, ३ शक्ति, ४ शिव और ५ विष्णु) के पूजन सहित भगवान् वरुण के पूजन हेतु 'सङ्कल्प' करे । 'सङ्कल्प' के बाद क्रम से भगवान् गणेश, सूर्य, शक्ति, शिव और विष्णु का पञ्चोपचारों से पूजन करे ।

पञ्च-देवताओं के पूजन के बाद भगवान् श्री वरुणदेव का ध्यान करे । यथा—

ॐ पुष्करावर्तकैर्मघैः, प्लावयन्तं वसुन्धराम् ।

विद्युत्-गर्जित-सन्नद्ध-तोयात्मने नमाम्यहम् ॥

यस्य केशेषु जीमूतो, नद्यः सर्वाङ्ग-सन्धिषु ।

कुक्षौ समुद्राश्चत्वारस्तस्मै तोयात्मने नमः ॥

अर्थात् घूम-घूम कर आनेवाले पुष्कर मेघों द्वारा धरती को जल से आप्लावित करनेवाले, बिजली की कड़क द्वारा जल-वर्षा के लिए तत्पर रहनेवाले, जिनके केशों में मेघ और सभी अङ्गों की सन्धियों में नदियाँ विराजमाना हैं, जिनकी कोख में चारों समुद्र अवस्थित हैं, उन जल-तत्त्व के अधिष्ठाता वरुण देव को नमस्कार ।

इस ध्यान को पढ़कर, अपने शिर पर पुष्प चढ़ाकर मानसोपचारों से पूजा करे । फिर अर्घ्य-स्थापन कर, पुनः भगवान् श्रीवरुण का ध्यान करते हुए उनका आवाहन करे तथा यथा-शक्ति उनका पूजन करे ।

इसके बाद एकाग्र-चित्त होकर, अच्छी वर्षा के लिए, दृढ़ निश्चय के साथ, किसी नदी या उसके अभाव में किसी जलाशय (तालाब) के पास जाकर, 'हुं श्रीं हुं' इस मन्त्र का जप करते हुए उसमें प्रवेश करे । नाभि तक गहरे जल में खड़े होकर निम्न विनियोग पढ़े—ॐ अस्य मन्त्रस्य प्रजापतिः ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, श्रीवरुणः देवता, एतद् राज्यमभि-वाप्य सु-वृष्ट्यर्थं जपे विनियोगः ।

इसके बाद 'ॐ वं' मन्त्र का 'आठ हजार' जप करे ।

[२] ॐ हूं ह्रीं क्षं क्षां, क्षि क्षीं, क्षु क्षूं, क्षे क्षैं, क्षों क्षौं, क्षं क्षः, हूं फट् ठं ठः ।

[३] ॐ ह्रीं क्षे क्षीं, क्षुं क्षूं, क्षे क्षैं, क्षों क्षौं, क्षः हूं ।

उक्त दोनों मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र को जलाशय के मध्य में पूर्व - मुख खड़े होकर जपे ।

—श्रीयुत घोरानन्दनाथ, १०८ चकराघाट, सागर



(१३)



सर्व-सिद्धि-प्रद श्रीगणेश-कवच

भगवान् गणेश का ध्यान कर, मानसोपचारों से उनका पूजन करे । तब निम्न 'कवच-स्तोत्र' का पाठ करे—

शृणु बक्ष्यामि कवचं, सर्व-सिद्धि-करं प्रिये ! पठित्वा धारयित्वा च, मुच्यते सर्व-सङ्कटात् ॥
 आमोदश्च शिरः पातु, प्रमोदश्च शिखोपरि । सम्मोदो भ्रू-युगे पातु, भ्रू-मध्वे तु गणाधिपः ॥
 गण-क्रीडो नेत्र-युग्मे, नासायां गण-नायकः । गण-क्रीडान्वितः पातु, वदने सर्व - सिद्धये ॥
 जिह्वायां सुमुखः पातु, ग्रीवायां दुर्मुखः सदा । विघ्नेशो हृदयं पातु, विघ्न-नाशश्च वक्षसि ॥
 गणानां नायकः पातु, बाहु-युग्मे सदा मम । विघ्न-कर्त्ता च उदरे, विघ्न-भर्त्ता च मे मोनी ॥
 गज-वक्त्रः कटी-देशे, एक-दन्तो नितम्बके । लम्बोदरः सदा पातु, गुह्य - देशे ममारुणः ॥
 व्याल-यज्ञोपवीती मां, पातु पाद-युगे तथा । जापकः सर्वदा पातु, जानु-जङ्घे गणाधिपः ॥
 हरिद्रः सर्वदा पातु, सर्वाङ्गे गण - नायकः । य इदं प्रपठेन्नित्यं, गणेशस्य महात्मनः ॥
 कवचं सर्व-सिद्धाख्यं, सर्व-विघ्न-विनाशनं । सर्व-सिद्धि-करं साक्षात्, सर्व-पाप-प्रमोचनम् ॥
 सर्व-सम्पत्-प्रदं साक्षात्, सर्व-शत्रु-क्षय-करं । ग्रह-पीडा ज्वरो रोगो, ये चान्ये गुह्यकादयः ॥
 पठनात् श्रवणादेव, नाशमायान्ति तत्-क्षणात् । धन-धान्य-करं देवि ! कवचं सुर-पूजितम् ॥

उक्त 'कवच-स्तोत्र' का नित्य प्रातःकाल पाठ करनेवाला सभी सङ्कटों से रक्षा पाता है ।
 उसके सभी विघ्नों का नाश होता है और उसकी सभी कामनाएं पूर्ण होती हैं । सभी पापों से

छुटकारा मिलता है, शत्रुओं का नाश होता है। ग्रह-बाधा, ज्वर आदि रोगों का निवारण होता है और सभी प्रकार की सम्पत्ति, धन-धान्यादि की प्राप्ति होती है। भोज-पत्रादि में इस 'कवच' को विधि-वत् लिखकर मन्त्र-बद्ध कर धारण करने से भी यही सब फल धारण करनेवाले को मिलते हैं।



(१४)

नव-ग्रह यन्त्र

१५ सूर्य

६	१	८
७	५	३
२	६	४

१८ चन्द्र

७	२	६
८	६	४
३	१०	५

२१ मङ्गल

८	३	१०
६	७	५
४	११	६

२४ बुध

६	४	११
१०	८	६
५	१२	७

२७ गुरु

१०	५	१२
११	६	७
६	१२	६

३० शुक्र

११	६	१३
१२	१०	८
७	१४	६

३३ शनि

१२	७	१४
१३	११	६
८	१५	१०

३६ राहु

१३	८	१५
१४	१२	१०
६	१६	११

३९ केतु

१४	६	१६
१५	१३	११
१०	१७	१२

१ विपरीत ग्रह के दिन, उस ग्रह का 'यन्त्र' लिखे। उदाहरणार्थ, यदि सूर्य-ग्रह विपरीत है, तो सूर्य का १५ संख्यात्मक यन्त्र रवि-वार को लिखे अथवा यदि चन्द्र-ग्रह विपरीत है, तो चन्द्र का १८ संख्यात्मक यन्त्र सोम-वार को लिखे। राहु और केतु के यन्त्र शनि-वार को लिखे।

२ यन्त्र, 'भोज-पत्र' पर 'अष्ट-गन्ध' से 'अनार की कलम' द्वारा लिखे। 'अष्ट-गन्ध' निम्न-लिखित आठ वस्तुओं से तैयार होती है—१ केशर, २ कपूर, ३ अगर, ४ तगर, ५ कस्तूरी, ६ अम्बर, ७ गोरोचन और ८ श्वेत या लाल चन्दन। इन आठ वस्तुओं में, यदि कोई वस्तु अप्राप्य हो, तो उसके स्थान पर 'जाय-फल' या 'जावित्री' ले सकते हैं।

३ भोज-पत्र पर उक्त प्रकार से लिखे गए 'यन्त्र' को 'ग्रह' के बीज-मन्त्र से १०८ बार हवन कर 'सिद्ध' कर ले।

४ ग्रहों के लिए 'बीज-मन्त्र', 'जप-संख्या' एवं 'जप-काल' निम्न प्रकार हैं—

सूर्य—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सूर्याय नमः। ६,०००। प्रातः।

चन्द्र—ॐ श्रां श्रीं श्रौं सः चन्द्राय नमः। ११,००० सायं।

मङ्गल—ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः। १०,०००। सन्ध्या।

बुध—ॐ व्रां व्रीं व्रौं सः बुधाय नमः। १६,०००। सायं।

गुरु—ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौं सः गुरुवे नमः। १६,०००। सन्ध्या।

शुक्र—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः शुक्राय नमः। ६,०००। सूर्योदय।

शनि—ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः शनैश्चराय नमः। २३,०००। सायं।

राहु—ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः राहवे नमः। १८,००० रात्रि।

केतु—ॐ म्रां म्रीं म्रौं सः केतवे नमः। १७,०००। रात्रि।

५ उक्त प्रकार सिद्ध किए हुए 'यन्त्र' को 'ताबीज' में रखे। सूर्य और मङ्गल के लिए 'ताम्र' की, चन्द्र और शुक्र के लिए 'चाँदो' की, बुध और गुरु के लिए 'स्वर्ण' की तथा शनि, राहु और केतु के लिए 'लौह' की ताबीज बनवाएँ।

६ ताबीज को दाईं भुजा या गले में धारण करे।

७ विपरीत ग्रह-शान्ति के लिए निम्न प्रकार व्रत रखे—सूर्य-व्रत : ३० रवि-वार, चन्द्र-व्रत : १० या ५४ सोमवार, मङ्गल-व्रत : २१ या ४१ भौम-वार, बुध-व्रत : १७ या २१ या ४५ बुधवार, गुरु-व्रत : १६ गुरुवार या १ या ३ वर्ष तक प्रति गुरुवार, शुक्र-व्रत : २१ या ३१ शुक्र-वार, शनि-व्रत : १६ या ५१ शनि-वार, राहु-व्रत : १८ शनि-वार, केतु-व्रत : ५ शनि-वार।

८ 'व्रत' पूर्ण होने के बाद दान करे। ग्रहों के लिए दान-वस्तुएँ निम्न प्रकार हैं—

सूर्य : गेहूँ, जौ, गुड़, ताँबा, रक्त-वस्त्र, कमल, चन्दन, मूंगा ।

चन्द्र : चावल, श्वेत-वस्त्र, चाँदी, शङ्ख, चन्दन, पुष्प, चीनी, मिश्री, घी, दही, मोती

मङ्गल : ताँबा, सीसा, गेहूँ, रक्त-वस्त्र, चन्दन, पुष्प, गुड़, मसूर-दाल, मूंगा ।

बुध : काँस, हाथी-दाँत, हरा-वस्त्र, पन्ना, सोना, कपूर, जौ, घी, षट्-रस भोजन ।

गुरु : पीला-वस्त्र, सोना, पुस्तक, मधु, शक्कर, छाता ।

शुक्र : सोना, चाँदी, चावल, घी, श्वेत-वस्त्र, चन्दन, दही, सुगन्धित वस्तु, मिश्री ।

शनि : काला वस्त्र, लोहा, काली उड़द, नीलम, सरसों-तैल, कुलथी, काले पुष्प ।

राहु : अभ्रक, काला तिल, काला वस्त्र, कम्बल, तैल ।

केतु : काला तिल, काला वस्त्र, ध्वजा, सप्त-धान्य, कम्बल, तैल ।

६ विपरीत ग्रह की शान्ति के लिए दाएँ हाथ की अँगुलियों में अँगूठो भी धारण कर सकते हैं । विभिन्न ग्रहों के लिए अँगूठी में नग' निम्न प्रकार होने चाहिए—

सूर्य : माणिक्य, चन्द्र : मुक्ता, चन्द्र-कान्त, मङ्गल : प्रवाल, बुध : पन्ना, गुरु : पुष्कराज, शुक्र : हीरा, शनि : नीलम, राहु : पिरोजा, केतु : लसुनिया ।

१० विशेष रूप में—'चन्द्र' ग्रह-भगवान् शिव की पूजा । बुध एवं गुरु के लिए अमावास्या-व्रत । शुक्र के लिए गो-सेवा, गो-पूजा । शनि के लिए महा-मृत्युञ्जय-जप, हनुमान-पूजा लाभ-कारक है ।



(१५)

अभया-अपराजिता

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि, अभयामपराजिताम् ।

या शक्तिर्मामकी वत्स ! रजो-गुण-मयी ततः ॥

सर्व-शक्ति-मयी साक्षात्, सर्व - मन्त्र - मयी तथा ।

या स्मृता पूजिता जप्त्वा, न्यस्ता कर्मणि योजिता ॥

सर्व-काम-दुघा वत्स ! शृणु चैतां ब्रवीमि ते ।

ॐ नमस्ते त्वभये, अनवद्ये, अनघे, अजिते ! असिते, अमृते, अपराजिते, पठति सिद्धे ! स्मरति विद्ये, वरानने, ध्रुवे, अरुन्धति ! सावित्रि, उमे, गायत्रि, जात - वेदसे, मानस्तोके ! सरस्वति, धरणि, धारणि, सौदामिनि, दिते ! वनिते, गौरि, गान्धारि,

मातङ्गि, कृष्ण, यशोदे ! सत्य - वादिनि, कालि, कपालिनि, रौद्रे ! सर्वोपचय-कर-स्थल-
गतं, जल-गतं, अन्तरिक्ष-गतं । मां रक्ष-रक्ष सर्व-भूतोपद्रवेभ्यः स्वाहा ।

॥ इत्येषां कथितां विद्यां अभयाऽपराजिताम् ॥

॥ फल-श्रुति ॥

एतस्या स्मृति-मात्रेण, भयं क्वापि न जायते । नोपसर्गो न रोगांश्च, न व्याधो नापि तस्कराः ॥
न राजानोपसर्गाश्च, न द्विपा नापि शत्रवः । यक्ष-राक्षस-वैताला, शाकिन्यो न च ग्रहाः ॥
नाग्नेर्भयं न वाता नात्र समुद्रा न वै विषात् । कार्मणे वा शत्रु - कृतं, वशीकरणमेव च ॥
उच्चाटनं स्तम्भनं वा, विद्वेषणमथापि वा । न किञ्चित् प्रभवे तत्र, त्रयं चैषा वर्तते मया ॥
पठेत् वा यदि वै रात्रौ, पुस्तके वा मुखेऽथवा । हृदि वा द्वार-देशे वा, वर्तते निर्भयः पुमान् ॥
हृदये विन्यसेच्चैनां, ध्यायेद् देवीं चतुर्भुजाम् । रक्त-माल्याम्बर-धरां, पद्म-राग-सम-प्रभाम् ॥
पाशांकुशाभय - वरैरलंकृत - चतुर्भुजाम् । साधकेभ्यः प्रयच्छन्ति, रत्न - स्वर्णादिकामपि ॥
नातः पर-तरं किञ्चित्, वशीकरणमुत्तमम् । रक्षणं पावनं वापि, नात्र कार्या विचारणा ॥
प्रातः कुमारिका पूज्या, वाद्यैराभरणैरपि । उभयं वाचनीयास्तास्तत्-प्रीता प्रीतये तु सा ॥

सुदर्शन-वेदे चास्या, पौरश्चरणिको विधिः ।

॥ इति अभया-अपराजिता ॥

‘अभया अपराजिता’ के उक्त मन्त्र का स्मरण करने मात्र से सभी प्रकार के भयों का निवारण होता है । रोगों से रक्षा होती है और चोर या शासक—कोई भी किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सकते । यही नहीं, भूत-प्रेत एवं ग्रहों से भी स्मरण-कर्ता की रक्षा होती है । विशेष ध्यान देने की बात यह है कि ‘मन्त्र’ को स्मरण करने के पूर्व चतुर्भुजा भगवती अभया अपराजिता का ध्यान कर ले—वे रक्त-माल्याम्बर-धरा, पद्म-राग-सम-प्रभा हैं और हाथों में पाश, अंकुश तथा अभय, वर-मुद्रा धारण किए हैं । इस प्रकार ध्यान कर, उनका मानसोपचारों से पूजन करे । तदनन्तर ‘ॐ नमस्ते त्वभये’ से लेकर ‘सर्व-भूतोपद्रवेभ्यः स्वाहा’ तक मन्त्र का यथा-शक्ति जप प्रति-दिन प्रातः, सायं एवं रात्रि में किया करे । साथ ही, यथा-सुविधा प्रातः-काल ‘कुमारी-पूजन’ भी करता रहे । इस प्रकार नियमित रूप से साधना करनेवाला सब प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न होता है ।



(१६)



अभीष्ट फल-दायक सदा-शिव-कवच

भगवान् शिव का प्रस्तुत कल्याणकारी कवच अत्यन्त छोटा है और प्रायः अनुभूत है । आशा है, भक्त-जन इसका प्रातःकाल नित्य-पाठ कर इससे लाभ उठाएँगे । इस 'कवच' के पाठ से सभी कामनाओं की पूर्ति एवं सर्व प्रकार से रक्षा होती है । ॥ श्रीदेवी उवाच ॥

भगवन् देव-देवेश ! सर्वाम्नाय-प्रपूजित !
सर्वं मे कथितं देव ! कवचं न प्रकाशितम् ॥१
प्रासादाख्यस्य मन्त्रस्य, कवचं मे प्रकाशय ।
सर्व-रक्षा-करं देव ! यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ॥२
॥ श्री भगवानुवाच ॥

विनियोग—ॐ अस्य प्रासाद-मन्त्र-कवचस्य श्री वाम-देव ऋषिः । पंक्तिश्छन्दः । सदा-शिवः देवता । सकलाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीवाम-देव-ऋषये नमः शिरसि । पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे । सदा-शिव-देवाय नमः हृदि । सकलाभीष्ट-सिद्धये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

॥ मूल - पाठ ॥

शिरो मे सर्वदा पातु, प्रासादाख्यः सदा-शिवः ।
षडक्षर-स्वरूपो मे, वदनं तु महेश्वरः ॥१
पञ्चाक्षरात्मा भगवान्, भुजौ मे परि-रक्षतु ।
मृत्युञ्जयस्त्रि-बीजात्मा, आस्थं रक्षतु मे सदा ॥२

वट - मूलं समासीनो, दक्षिणामूर्तिरव्ययः ।
 सदा मां सर्वतः पातु, षट् - त्रिशार्ण-स्वरूप-धृक् ॥३
 द्वा - विशार्णात्मको रुद्रो, दक्षिणः परि-रक्षतु ।
 त्रि - वर्णात्मा नील-कण्ठः, कण्ठं रक्षतु सर्वदा ॥४
 चिन्ता - मणिबीज-रूपो, ह्यर्द्ध-नारीश्वरो हरः ।
 सदा रक्षतु मे गुह्यं, सर्व - सम्पत्-प्रदायकः ॥५
 एकाक्षर - स्वरूपात्मा, कूट-व्यापी महेश्वरः ।
 मार्तण्ड - भैरवो नित्यं, पादौ मे परि-रक्षतु ॥६
 तुम्बुराख्यो महा-बीज - स्वरूपस्त्रिपुरान्तकः ।
 सदा मां रण-भूमौ च, रक्षतु त्रि-दशाधिपः ॥७
 ऊर्ध्वमूर्द्धानिमोशानो, मम रक्षतु सर्वदा ।
 दक्षिणास्यं तत् - पुरुषः, पायान्मे गिरि - नायकः ॥८
 अघोराख्यो महा - देवः, पूर्वास्यं परि - रक्षतु ।
 वाम-देवः पश्चिमास्यं, सदा मे परि - रक्षतु ॥९
 उत्तरास्यं सदा पातु, सद्योजात - स्वरूप - धृक् ।
 इत्थं रक्षा - करं देवि ! कवचं देव - दुर्लभम् ॥१०

फल-श्रुति

प्रातः-काले पठेद् यस्तु, सोऽभीष्टं फलमाप्नुयात् ।
 पूजा - काले पठेद् यस्तु, कवचं साधकोत्तमः ॥११
 कीर्ति-श्री-कान्ति-मैधायुः, सहितो भवति ध्रुवम् ।
 तत्र स्नेहान्महा-देवि ! कथितं कवचं शुभम् ॥१२
 ॥ इति भैरव-तन्त्रे सदा-शिव-कवचं समाप्तम् ॥



ॐ श्रीकाल्यै नमः

पण्डित बलराम दुबे, ७ नवलकिशोर मार्ग, लखनऊ

इस अन्त-हीन तमस् में है कोई साथ ?
जो थाम सके बाग,
रोक ले अस्ताचल से गिरता हुआ रथ ?
खोजता रह जाता हूँ
बिखरे सितारों में खोई पहचान को;
न फिर कभी उगने का लेकर सङ्कल्प
सागर के गर्भ में समाए हुए चाँद को ॥
इस अन्त-हीन तमस् में है कोई नाम ?
जो गढ़ सके रूप,
दे सके नाम
उतार सके अन्तस् में स्पन्दित चैतन्य
शिव के वक्ष पर रखते हुए पाँव ??
उसे आते हुए देखता हूँ !
जिसे देखकर थर्रा उठे
स्याह शिकञ्जों में सिमटा आकाश
उसे चलते हुए देखता हूँ ।
दामिनी की कौंध में

कटते हुए नभ को देखते हुए डरता हूँ ।
डरते हुए देखता हूँ,
अर्थी पर लेटा है काल
निश्चल, निर्वृन्द, निस्पन्दित, निढाल !
है कोई पास ?
ले हाथों में खड्ग काट सके पाश,
हाँक सके लाश,
दे सके मौत को जीवन का लास्य ??
भूल सके पढ़कर मानवता का मन्त्र
गले में लटके नर-मुण्डों के साथ,
रोप सके वक्ष निश्चल निर्वृन्द
कि रुक सके काल का ताण्डवित नाच ?
निकाल सके जीभ
किसी भूल के प्रायश्चित्त में उफ के साथ ?
उन्माद में ठोकर लगाने के बाद,
भुका ले ही गरदन
स्वयं पर आई हुई लाज के साथ ??

‘कौल-कल्पतरु’ चण्डी

‘चण्डी’ मासिक पत्रिका की विशेषता यह है कि यदि आप इसे ध्यान से पढ़ने की कृपा करेंगे, तो आपको हिन्दू-धर्म के ‘व्यावहारिक पक्ष’ को समझने में बड़ी सरलता होगी । ‘हिन्दू-धर्म’ केवल एक सिद्धान्त या दर्शन मात्र नहीं है । उसका ज्ञान - मय क्रियात्मक पक्ष भी है और वही वास्तविक महत्त्ववाला है ।

‘चण्डी’ आपको अपने ‘हिन्दू-धर्म’ के क्रियात्मक पक्ष का पालन करने में कितनी सहायता दे सकती है, यह तो आप इसे अपना कर स्वयं ही समझ सकते हैं । हम तो इतना ही कह सकते हैं कि जिसने भी ‘चण्डी’ को ध्यान से जैसे ही देखा है, वह उसी समय से ‘चण्डी’ मासिक पत्रिका का स्थायी ग्राहक बन गया ।

अतः अपने शहर के समाचार-पत्र-विक्रेताओं से ‘चण्डी’ मासिक पत्रिका की आज ही माँग कीजिए अथवा हमें लिखिए—‘चण्डी’-कार्यालय, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग-६



‘चण्डी’ की विशेषांक-योजना

‘भारत’ में प्रतिकूल परिस्थितियों के होते हुए भी, समय-समय पर ऐसी विभूतियाँ आविर्भूत होती रही हैं, जिन्होंने व्यक्तिगत भौतिक उत्कर्ष की उपेक्षा करते हुए, निःस्पृह भाव से सत्-साहित्य के उद्धार के महत् कार्य में, अपना सम्पूर्ण जीवन उत्सर्ग कर दिया।

ऐसी ही एक विभूति थे ‘कौल - कल्पतरु’ पं० देवीदत्त शुक्ल (भूतपूर्व सम्पादक ‘सरस्वती’), जिन्होंने हिन्दी-भाषा में ‘तन्त्र-साहित्य’ का सर्वथा अभाव देखकर, उसकी पूर्ति करने का बीड़ा आज से ५० वर्षों पूर्व—१९१२ में उठाया था।

‘कौल - कल्पतरु’ शुक्ल जी के पुरुषार्थ का एक उज्ज्वल उदाहरण प्रसिद्ध ‘बृहत् तन्त्रसार’ का हिन्दी-रूपान्तर ‘हिन्दी तन्त्रसार’ है। तान्त्रिक विषयों के सम्बन्ध में यह संग्रह-ग्रन्थ वास्तव में ‘गागर-में-सागर’ की उक्ति चरितार्थ करता है।

‘चण्डी’ वर्ष ५१ की विशेषाङ्क-योजना के अन्तर्गत हिन्दी तन्त्रसार पूर्ण - रूप में पहली बार प्रकाशित होने जा रहा है। निवेदन है कि विशेषाङ्क-योजना के सदस्य बनकर आप भी इस महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ को प्राप्त कर लाभ उठाएँ।

विशेषाङ्क-योजना हेतु सदस्यता - शुल्क मात्र ५०) रु० है। विशेषाङ्क - योजना (अप्रैल ६२ से मार्च ६०) के अन्तर्गत कुल पाँच विशेषाङ्क प्रकाशित हो रहे हैं—१ शक्ति-तत्त्व (निबन्ध-संग्रह), २ कौल-विलास, ३ शाबर-मन्त्र-संग्रह, भाग ३, ४ सार्थ सौन्दर्य-लहरी, ५ हिन्दी तन्त्रसार। विशेषाङ्क-योजना के सदस्यों को ये पाँच विशेषाङ्क विशेष छूट पर दिए जाएँगे। अतएव आप विशेषांक-योजना से अवश्य लाभ उठाएँ।



श्रीगङ्गा-स्तुति

भगवान् विष्णु के चरण-कमलों से आविर्भूत होनेवाली, तीनों लोकों में पहुँचनेवाली, धर्म-भावना को प्रवाहित करने में प्रख्यात हे जहनु-सुता देवि गङ्गे ! मेरे पापों को दूर कर दो ॥१॥

तुम भगवान् विष्णु के चरणों से उत्पन्न हुई वंणवी शक्ति हो, भगवान् विष्णु ने तुम्हारी पूजा की है। अतः जन्म से लेकर मृत्यु तक पापों से मेरी रक्षा करो ॥२॥

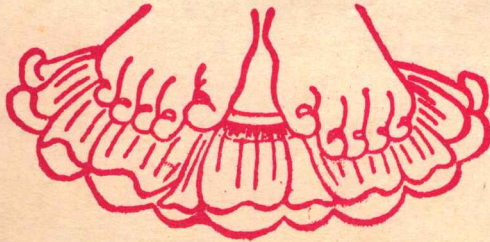
वायुदेव ने बताया कि स्वर्ग में, पृथ्वी पर और अन्तरिक्ष में जो करोड़ों पवित्र तीर्थ-स्थान हैं, वे सब हे जहनु-सुते गङ्गे ! तुममें विराजमान हैं ॥३॥

हे गङ्गे ! देवों और दानवों द्वारा नमस्कृत, दिव्य स्वरूपवाले तुम्हारे चरण-कमल को मैं प्रणाम करता हूँ। तुम मनुष्यों को उनकी भक्ति-भावना के अनुसार सदा भोग और मोक्ष प्रदान किया करती हो ॥४॥

देवताओं में तुम्हारे शुभ नाम नन्दिनी, नलिनी, वृन्दा, पृथ्वी, शुभगा, विश्व-काया, शिवा, सिता, विद्या-धरी, सु-प्रसन्ना, लोक-प्रसाधिनी, क्षेम्या, जाह्नवी, शान्ता और शान्ति-प्रदायिनी प्रसिद्ध हैं ॥ ५-६ ॥

फल-श्रुति

स्नान करते समय जो इन पवित्र नामों का कीर्तन करता है, उसके निकट तीनों लोकों में पहुँचने-वाली गङ्गा देवी आकर उपस्थित हो जाती हैं। ब्रह्मचारी और योगाभ्यास करनेवाले मुनियों को जो उत्तम दिशा प्राप्त होती है, वही श्रेष्ठ दिशा गङ्गा जी के तट पर रहनेवाले सभी प्राणियों को सुलभ होती है।



रजि० सं० ३२९८१/५७

रजि० सं० ए०डी० ९६

सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक : श्रीकृतशील शर्मा, परावाणी प्रेस, प्रयाग-२११ ००६



जगदम्बा की सामूहिक उपासना

कल्याण का एकमात्र मार्ग

(‘कौल-कल्पतरु’ शुक्ल जी का ‘चण्डी’ १६४२ में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण आह्वान)

आज अति ही दारुण समय उपस्थित है। माँ की शरण ग्रहण करने पर ही मानव का निस्तार हो सकता है। अब केवल वर्ष में दो बार माता की याद कर लेने से काम न चलेगा। चाहिए तो यह कि नित्य ही कुछ-न-कुछ समय निकाल कर माँ की याद अति श्रद्धा के साथ की जाय, परन्तु यदि यह सम्भव न हो, तो प्रति-मास शुक्ला अष्टमी को तो उनकी सेवा-पूजा में घण्टे-दो-घण्टे का समय अवश्य ही लगाया जाय।

क्या ही अच्छा हो, यदि प्रत्येक गाँव-शहर में किसी सुन्दर स्थान में शाक्त-बन्धु एकत्र होकर, घट-स्थापन-पूर्वक माँ का यजन-पूजन प्रारम्भ कर दें। घट-स्थापन-पूर्वक सविधि षोडशोपचार से माँ का पूजन कर चुकने पर जो लोग ‘चण्डी’ (श्रीदुर्गा सप्तशती) का पाठ कर सकते हों, ‘चण्डी’ का पाठ करें और जो पाठ न कर सकते हों, वे चुपचाप बैठ कर ‘मन्त्र-जप’ या ‘नाम-जप’ ही करें।

इस प्रकार जगदम्बा का यजन सामूहिक रूप से करने से लोक-कल्याण तो होगा ही, साथ ही परिवार-समाज में धार्मिक भावना का भी उदय होगा। ऐसा करने से ही आज कल्याण सम्भव है, दूसरा कोई उपाय नहीं है।



जगदम्बा की आराधना हेतु सद्यः फलदायी ‘चण्डी’ मासिक पत्रिका पढ़ें !